National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2025; 1(60): 110-113
© 2025 NJHSR
www.sanskritarticle.com

मयंक यादव
छात्र, हिंदी विभाग,
जामिया मिल्लिया इस्लामिया,
नई दिल्ली

डा० रोहित यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर ,
एमिटी स्कूल ऑफ़ लैंग्वेजेज़,
लखनऊ

Correspondence:
मयंक यादव
छात्र, हिंदी विभाग,
जामिया मिल्लिया इस्लामिया,
नई दिल्ली

प्रवासी भारतीय कथा साहित्य में चित्रित स्त्रियां

मयंक यादव, डा० रोहित यादव

सारांश

स्त्री विमर्श 20 वी सदी का एक ऐसा वैचारिक आंदोलन है जिसके भीतर स्त्री की उपस्थिति सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्तरों पर अध्ययन का केंद्र बनी हैं। उसके भीतर ही अध्ययन का विषय है, प्रवासी साहित्य । प्रवासी साहित्य भी साहित्य की एक धारा है, पर यहाँ अन्य धाराओं की तरह पुरुष वर्चस्व नहीं है। लिंगानुपात में यहाँ महिला साहित्यकारों की भागीदारी अधिक है। प्रवास काल में होती कठिनाइयों का प्रभाव मुख्य रूप से स्त्रियों पर ही पड़ता है। प्रवासी स्त्रियां शिक्षित हैं स्वावलंबी और सशक्त हैं, पर फिर भी कहीं न कहीं वे सभी पितृसत्ता के संक्रमण से बच नहीं पाती। इस बात से यह स्पष्ट हो जाता है कि स्त्रियों के आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त होने पर भी इस बात का भरोसा नहीं की वे विश्व के किसी भी देश की आर्थिक और सामाजिक रूप से अशक्त महिला से बेहतर स्थिति में होंगी प्रवासी भारतीयों की कहानियाँ पढ़ने पर यह बात स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इन कहानियों को पढ़कर तत्कालीन प्रवासी स्त्रियों की स्थिति दिखाई पड़ती है, जहाँ वे अपनी अस्मिता को बचाने का भरसक प्रयास कर रही हैं। प्रवासी स्त्रिया संघर्षरत हैं, अपनी तत्कालीन स्थिति से असंतोष रखते हुए उसे बेहतर और स्थिर बनाती चित्रित हुई हैं। हम पहली कहानी आधी पिली-आधी हरी गौतम सचदेव का उल्लेख न करें तो हम यह पाएंगे कि इस संपूर्ण शोध पत्र में 'स्त्रियों के द्वारा चित्रित स्त्रियां' ही हैं। इन कहानियों से यह बात तो स्पष्ट हो जाती है कि सामाजिक स्वीकृति के लिए आर्थिक स्थिति केवल एक हद तक कारगर है।

भूमिका-मानवीय संवेदनाओं पर देश काल की सीमाएँ नहीं होती हैं।किसी एक स्थान से दूसरे स्थान पर प्रतिस्थापित होने पर, उस पूर्व स्थान स्थान का मोह अनिवार्यता रह ही जाता है फिर वह चाहे किंचित मात्र ही क्यों न हो। इसी मूल भाव पर आधारित साहित्य की एक धारा है, प्रवासी साहित्य। प्रवासी साहित्य वह साहित्य है, जो अपने घर से दूर रहते हुए घर की स्मृति में रचा जाए,परंतु केवल घर की स्मृति को ही केंद्र में रख कर लिखे गए साहित्य को तो नास्टैल्जिया कह कर नकार दिया जाएगा। प्रवासी साहित्य निरा नोस्टाल्जिया न होकर दो संस्कृतियों के मेल और द्वंद को उभारता हुआ साहित्य है जहाँ स्वदेश व परदेश दोनों ही समान रूप से चित्रित होता है पर ऐसा सदा हो ज़रूरी नहीं है। "सूरज क्यों उगता है", सुधा ओम ढींगरा की यह कहानी इस बात का उदाहरण है, साथ ही यह पाश्चात्य संस्कृति को उघाड़ता हुआ लेखन है जहाँ सूक्ष्मता और गूढ़ता दोनों ही अंतर्निहित है।प्रवासी साहित्य मुख्यतः कथा साहित्य ही है। ऐसा नहीं है कि अपनी जमीन से कटे, डार से बिछुड़े, जन-समूहों ने विरहगीत या करुणा विगलित शोकगीत नहीं लिखे,परन्तु इन समूहों के सदस्यों को, उनके कथा लेखन से ही व्यापक रूप में स्वीकृति और शोहरत मिली है। जिन लोगों ने सर्वप्रथम प्रवास किया उनमें गिरमिटिया मज़दूर ही मुख्य थे जो ज़ोर-ज़बरदस्ती या तो लोभ वश फ़िजी, सूरीनाम,त्रिनाद और मॉरिशिस जैसे द्वीपीय देशों में ले

जाए गए। इन सभी की याद में जो गीत इन प्रवासियों की पत्नियों ने और चाहने वालों ने गाए वे आज भी लोक में प्रचलित हैं। साथ ही वह भी गीत हैं जो सूरीनाम,मारीशस, फिजी जैसे देश में गए लोगों ने लिखें।

"मोरी धानी चुनरिया इतर गमकै"
सोने की थारी मा जिवना जिवायों,
मोरी बारी उमरिया...।
परदेशी भवरा हो घर के सुध बिसरी।
उमरिया धोखे में बीत गइले राम।
बहुत मोहिया लागे है भारत देसवा।
भयल जहजवा बैरी बहिनी, हरिलयिगा पियरवा हमार
इगले सूरीनामवा लौट नहिं अइले कि फूटले करमवा हमार।
पेटवा के खातिर छोड़ आये देसवा..।
खेतवा छोड़िनी, बगीचा छोड़िनि आयो समुन्दर पार।
रोवत हुई है तिरिया हमारी, कलपत होई गदेलवा
मछरी जइसी तलफत होई हैं, जिहरे दीन जनमवा।[1]

प्रो०अजय नावरिया प्रवासी हिन्दी कहानी एक अंतर्यात्रा के भीतर अपने निबन्ध में प्रवासी साहित्यकारों की तीन श्रेणिया बताते हैं।

"एक श्रेणी में, वह साहित्य आता है, जो गिरमिटिया मजदूरों की पहली या दूसरी पीढ़ी द्वारा लिखा गया है। दूसरी श्रेणी, खाड़ी के देशों में रोज़गार या विवाह के कारण गए हिन्दी भाषी नागरिक हैं। इनमे से अधिकांश की वापसी लगभग तय है। एक तो खाड़ी के देश, उस तरह सोशल वेलफेयर स्टेट नहीं है, जिस तरह यूरोप और अमेरिका के देश हैं, दूसरे वहाँ धर्म आधारित कानून और संविधान के कारण नागरिक स्वतंत्रता नहीं है। वहाँ गए अधिकांश प्रवासी अशिक्षित - अर्धशिक्षित, कुशल अकुशल कारीगर मजदूर हैं जिन्हें ज़्यादा फिक्र ज्यादा-से-ज्यादा धन कमाने की रहती है। उन्हें पहचान के संघर्ष में पड़ने का समय नहीं है। यह तीसरी श्रेणी, उन सुशिक्षित, मध्यवर्गी हिन्दी भाषियों से बनी है जो बेहतर जीवन और संसार के लिए यूरोप और अमेरिका के देशों में प्रवास कर गए। यह प्रवास मुख्य रूप से अस्सी के दशक में हुआ।"[2]

प्रवासी साहित्य न केवल घर की याद में लिखा गया साहित्य है, बल्कि दो संस्कृतियों को अपनाने के बीच उत्पन्न होने वाले द्वंद को उद्घाटित करता साहित्य है। इस सहित्य के केंद्र में, पारिवारिक विघटन, दोहरी पहचान, अस्मिता की खोज, अजनबियत, मानवीय संवेदनाओं की खोज और मूल्यों का विघटन केंद्र में हैं। पारिवारिक विघटन और अजनबीयत यह दोनों ही तत्व साठोत्तरी कहानियों के मूल में रहे हैं। जहाँ रोजगार की तलाश में छोटे कस्बों से शहरों की ओर होते प्रतिस्थापन ने संयुक्त परिवारों के टूटने में अहम भूमिका निभाई वहीं दूसरी ओर पति-पत्नी के रिश्तों के मध्य किसी तीसरे को भी लाया, जिसका प्रभाव तत्कालीन मनुष्यों के सामाजिक, आर्थिक और मानसिक स्थिति पर पड़ा। जिसके केंद्र में स्त्रियाँ और बच्चे ही रहे। यह स्थिति तत्कालीन रचित नाटकों, कहानियों और उपन्यासों में दृष्टिगत होता है। प्रवासी साहित्य के अधिकांश कथा साहित्य में यह स्थिति केंद्र में है, जहाँ स्त्री के एकाकी जीवन की यातनाएँ प्रत्येक कहानी में एक नए रूप से ध्यान आकर्षित करती हैं।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि संपूर्ण प्रवासी साहित्य में लिंगानुपात के आधार पर महिला साहित्यकारों की भागीदारी आधिक है।

बीज शब्द - प्रवास, अस्मिता, विघटन, संत्रास, स्त्री, संवेदना।

प्रवास किसी भी साधारण व्यक्ति के ऊपर असाधारण तरह से प्रभाव छोड़ सकता है। यह प्रभाव कई स्तरों और आयामों पर भी हो सकता है। मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी इन सभी प्रवासियों के ऊपर देर-सवेर परिलक्षित अवश्य होते हैं। प्रवास का सबसे अधिक प्रभाव स्त्रियों और बच्चों पर पड़ता है। पारिवारिक विघटनों से यदि किसी के समक्ष अंधकार व्याप्त हो रहा है, तो वे हैं, बच्चे । गौतम सचदेव की कहानी *आधी पीली आधी हरि* इसी विघटन का परिचायक है। जहाँ माँ-पिता दोनों ही लोग एक दूसरे से अलग हो चुके हैं और दूसरी शादी भी कर चुके हैं, जिनसे उनके बच्चे भी हैं। गुड़िया इन दोनों के मध्य फंस चुकी है। उसे अपना भविषय दिखाई नहीं पड़ता। प्रवासी साहित्य उन तथ्यों और कृत्यों को उद्घाटित करता है जिनके विषय में बात करना समाज में वर्जित है। यह जानते हुए कि यह सब हमारे समाज में बहुत गहरे व्यापत हैं। निर्मल वर्मा भी प्रवासी साहित्यकार की श्रेणी में आते हैं, पर उन्हें हिन्दी साहित्य में उस एकल दृष्टिकोण से न तो पढ़ा जाता है और न ही देखा यही बात उषा प्रियंवदा के विषय में भी लागू होती है। वर्मा अपनी कहानी *एक दिन का मेहमान* में जो विवरण पाठक के विवेक पर छोड़ देते हैं, प्रवासी साहित्य में वे वर्जित विवरण स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। उदाहरणार्थ 'अर्चना पेन्यूली' की कहानी *हाइवे-47* तमाम पारिवारिक विघटनों और पितृसत्तात्मक सोच का अकेले प्रतिनिधित्व करती है। शुभ का पति संदीप शादी के कुछ वर्षों बाद ही कापहेगन चला जाता है, इस आश्वासन के साथ की वह जल्द ही सबको बुला लेगा। कुछ समय बाद वह अपना संबंद्ध किसी दूसरी स्त्री के साथ होने की

जानकारी पत्र के माध्यम से देता है और तलाक के लिए भीख मांगने लगता है। शुभ एक कोरी आस लिए कोपहेगन 23 वर्ष की आयु में चली आती है। पर फिर भी संदीप उसे नहीं अपनाता । 15-20 वर्षों के बाद जब संदीप को वह औरत छोड़ देती है, तो वह पुनः शुभ से घनिष्टता बढ़ाने लग जाता है।

"मैं तुम्हारे विषय में असल में हमदोनों के विषय में काफी दिनों से सोच रहा हूँ। जब हम शादीशुदा थे तो हम में अच्छी निथ रही थी, राइट? मैं जानता हूँ कि मैंने तुम्हे दुःख दिया है। आहत किया है तुम्हें। पर हम इससे उबर सकते हैं। हमारे दो सुंदर लड़के हैं। क्या हम फिर से एक साथ?"

इसके उत्तर में वह कंपकपाते स्वर में बोली

"अगर मैं तुम्हारे साथ वह करती जो तुमने मेरे साथ किया तो क्या तुम मुझे स्वीकार करते? - उसकी खामोशी ने शुभ के क्रोध को और भड़काया। उत्तेजित स्वर में उसने उस पर दूसरा प्रश्न दागा, मैं पच्चीस साल की थी जब बेवजह ही तुम्हारे विश्वासघात का निशाना बनी। अब में पैंतालीस की हूँ- क्या तुम मुझे मेरी ज़िदगी के वे बहुमूल्य बीस साल लौटा सकते हो,"[3]

तब पर भी शुभ खुद को दया की दृष्टि से देखने लगी कि मयंक पढ़ाई के लिए लंदन जा चुका है राहुल भी चला जाएगा और वो अपने गुर्दे की बिमारी के साथ इस घर में अकेले रह जाएगी।

"अनायास ही उसे संदीप का ध्यान आ गया- वह भी तो अकेले रह रहा है। वह भी पड़ोस में ही। अगर वह उसके पास चली जाए? यूँ अकेले रहने से बेहतर तो किसी का भी साथ गवारा है। एक बिगड़ा हुआ, बेवफा पति का भी। डिनर के बाद वह टीवी खोलकर बैठी, अपनी उधेड़बन में थी जब राहुल ने अकस्मात उसे वह खबर दी "माँ, पापा को एक नई गर्लफ्रेंड मिल गई है।"[4]

प्रवासी साहित्य का तमाम लेखन इसी मूल संवेदना से भरा पड़ा है, जहाँ पुरुष केवल विकल्पों की खोज में है, ऐसे विकल्प जो पहले से बेहतर हो । भारत में भी यह स्थिति इसी प्रकार उत्पन्न होती है पर समाज के डर से उतना व्यापक रूप नहीं ले पाती जितना की वह विदेशों में ले लेती है। इसी क्रम में 'स्नेह ठाकुर' की कहानी *प्रथम डेट* पर भी बात होनी ज़रूरी है। आप उस स्थिति की कल्पना कीजिए की जब माँ और बेटी दोनों एक साथ तैयार हो रहे हो किसी डेट पर जाने के लिए। अदीति की माँ द्वन्द में है, अनेक बार खीझती भी है, खुद को दया की दृष्टि से देखती है पर वह ऐसी परिस्थितियों में आई कैसे? और इसका उत्तर वही है, पुरुषों की बेहतर की तलाश। प्रवासी हिंदी साहित्य में चित्रित स्त्रियां अपनी अस्मिता के लिए, अपने बच्चों के लिए भरसक संघर्ष करती चित्रित हुई हैं वह मानसिक रूप से अवश्य अपने आप को परेशान पाती है पर क्षणिक रूप में।अदिति की माँ भी स्वावलंबी है, किसी पर आश्रित नहीं है।

"आदमी स्वभावगत ही रहता है। बदल के भी आदमी बदलता नहीं है चाहे वह कितना ही पढ़ा-लिखा, सभ्यता के शिखर पर पहुंचा हुआ हो। काफी समय बाद यह अक्ल आई। कई सालों तक कुछ तथ्य हठी बालक की तरह भेजे में घुसने से साफ़ इंकार करते रहे, अंत में यह तथ्य स्वीकारना ही पड़ा कि शायद प्रकृति की तरह आदमी की ज़िंदगी भी अपने साँचे को बदल नहीं पाती है।संबंध टूट जाते हैं पर संदर्भ बने रहते हैं और आदमी तड़पता रहता है।"[5]

जिन मूल्यों का ह्रास प्रवासी व्यक्तियों के भीतर हुआ, यह कहानियाँ इन सभी मूल्या का द्योतक हैं। ऐसी स्थितियों में स्त्री का एक मात्र सहारा या जीवन की आशा वह अपने बच्चों में ढूंढती है। बच्चे ही वह कारण है जिनके कारण स्त्रियां अपने पति के साथ एक घुटन भरा जीवन जीने को विवश रहती हैं। लेकिन ऐसी भी स्थितियां आती हैं जब ये बच्चे भी माँ से मुख मोड़ लेते हैं। विदेशों में कूच कर गए प्रवासीयों को ऐसी परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है, जहाँ हर प्रत्येक व्यक्ति उनसे मुख मोड़ लेता है और असहाय व्यथा में छोड़ देते है। 'सुषम बेदी' की कहानी *गुनाहगार* इसी स्थिति की परिचायक है। जहाँ एक 70 वर्षीय वृद्ध विधवा पुत्र के विवाह उपरांत कहाँ रहेगी? के प्रश्न ने ठिठका रखा है। बहन-बहनोई के उकसाने पर वह अखबार में इश्तिहार तो निकलवा देती है, पर अब उसे अपने इस निर्णय पर संदेह होने लगा है, और वह खुद को गुनाहगार की दृष्ट से देखने लगी है।

"युअर मदर शुड हैव हर ओन इन्डिपेंडेंट लाइफ । मेरी माँ ने भी तो दूसरी शादी की है। इसमे कोई बड़ी बात नहीं। यहाँ जो रहता है उसे यहीं के रीति- रिवाज के अनुसार चलना चाहिए।"[6]

इस स्थिति में जब वह इश्तहार देती है, तो विवरण ऐसे की जो नव विवाहिता के लिए भी नहीं मिल पाते हो। अधेड़ उम्र का, पंजाबी हो पर किसी और प्रांत का भी हो सकता है स्वस्थ, शराब न पीनेवाला, ऐब और बीमारियों से मुक्त, विधुर तलाकशुदा या अविवाहिता। रत्ना किंकृत्वविमूढ़ है, जहाँ वह ऐसे दो राहे पर खड़ी है जहाँ वह या तो शादी करके किसी अन्जान व्यक्ति के साथ जीवन के कुछ अंतिम वर्ष खुद को कोस्ती रहे, कि उसका मृत पति उसे ऊपर से देखते हुए क्या सोचता होगा? कि लगभग पूरा जीवन मेरी याद में काट दिया और अब अंतिम दौर में ये? रत्ना अवसाद ग्रस्त हो

चुकी है जहाँ एक और वह घृणा वितृष्णा से भरती जा रही है तो दूसरी और अपनी परवरिश पर प्रश्न चिह्न लगाती है।

"किस तरह बड़ा किया कि आज बेटा इतना पराया हो गया। सास-बहू के रिश्तों में तनाव कोई क्यी नई बात तो नहीं। सभी घरों में ऐसा होता है। पर इससे कोई माँ को घर में नहीं रखता ?"[7]

यह कहानी अनेक अनुत्तरित प्रश्नों के साथ एक ऐसे धरातल पर समाप्त होती है जहाँ उत्तरों को पाठक के विवेक पर छोड़ दिया जाता है।

"अपने इस हाल के लिए किसको दोष दूँ मैं, बता न? किसको? किस्मत को या खुद को?

सारे कमरे में अखबार की चिंदियाँ फैली हुई थीं और रत्ना ज़मीन पर उनके बीच घटने पर सर टिकाए इस तरह बैठी हुई थी जैसे पहली बार विधवा हुई हो।

पहली बार अपने पति की मौत का मातम मना रही हो।"[8]

इस तरह के अनेक प्रसंग प्रवासी कथाओं में अनेक तरह से आते हैं। जहां संदेश भिन्न हैं पर माध्यम एक । ज़किया जुबैरी की कहानी *मन की सॉकल* भी इसी का एक उदाहरण है। सीमा उम्र भर समीर को बचाती रही पिता की मार से भी और छाया से भी। जब कभी समीर को मार पड़ने की स्थिति बनती वह जूतो की चोट खुद सह लेती लेकिन उसे इस बात का संतोष रहता कि समीर को नहीं लगा। समीर की वह शादी करवाती है, एक अंग्रेज़ पर भारतीय गुणों से युक्त लड़की से। समीर का बर्ताव अब सबके प्रति बदल चुका है, वह तलाक ले चुका है, जिस माँ को दूर जाने देने के ख्याल से वह काँप उठता था, अब वह माँ उससे डरने लगी है। वह रोज कोई दूसरी लड़की घर लाता है। सीमा के विरोध करने पर वह झुंझला के उसकी छाती पर एक घुसा मार देता है, जहाँ स्तन कैंसर की वजह से उसका स्तन निकाला जा चुका है। यह कहानी एक ऐसे प्रसंग के साथ खत्म होती है जो किसी को भी साल सकता है। कई दिनों तक ।

"सीमा शरीर के दर्द से लड़ रही है.. आत्मा के धाव सहला रही है।मुँह में धनिये के बीजों का स्वाद है मगर दिल में एक डर भी है. कही अपने गुस्से में समीर उसकी हत्या तो नहीं कर देगा? नहीं नहीं. यह नहीं हो सकता आखिर पुत्र है। भला ऐसा कैसे कर सकता है। मगर दिल का डर उसे सोने नहीं दे रहा। बिस्तर पर करवटें बदल रही है..

सीमा एकाएक बिस्तर से उठती है और भीतर से कवरे की साँकल चढ़ा देती है।"[9]

निष्कर्ष - इन सभी कहानियों के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि केवल शिक्षा भी स्त्रियों के शोषण को रोकने में सक्षम नहीं है। वे सभी प्रतिरोध करती हैं, स्थिति को वैसे ही स्वीकार नहीं करती जैसी वह है। ये सभी स्त्रियां मानसिक स्तर पर द्वंद में हैं। यह कहानियां शादी जैसे सामाजिक बंधनों पर एक प्रश्न चिन्ह लगाती हैं, जहां शादी का एक मात्र हेतु स्त्रियों को के विकास का बाधक माना जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ-

1. शर्मा, तेजेंद्र(सं.), देशान्तर प्रवासी भारतीयों की कहानियाँ, हिंदी अकादमी, दिल्ली समुदाय भवन,पद्म नगर, किशनगंज,दिल्ली-110007.
2. आर्य, सुषमा(सं.)& नावरिया, अजय(सं.), प्रवासी हिंदी कहानी की अंतर्यात्रा, शिल्पायन-10295, लेन न०-1, शाहदरा, दिल्ली-110032.
3. पियूष, जगदीश (सं), अवधी ग्रंथावली खंड-एक,वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली-110002.
4. बेदी, सुषम, https://www.abhivyaktihindi.org/kahaniyan/vatan_se_door/2005/gunahgar/gunahgar1.htm
5. श्रीधर,प्रो० प्रदीप(सं०),प्रवासी हिंदी साहित्य के विविध आयाम, विद्या प्रकाशन, गुजैनी कानपुर-32.

पादटिप्पणी -

[1] पियूष, जगदीश(सं), अवधी ग्रंथावली खंड-एक, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली-110002,पृ०-9

[2] आर्य, सुषमा (सं.) & नावरिया, अजय(सं०), प्रवासी हिंदी कहानी की अंतर्यात्रा, शिल्पायन-10295, लेन न.-1, शाहदरा, दिल्ली-110032, पृ०-11.

[3] शर्मा, तेजेंद्र (सं.), देशान्तर प्रवासी भारतीयों की कहानियाँ, हिंदी अकादमी, दिल्ली समुदाय भवन, पद्म नगर, किशनगंज,दिल्ली - 110007,पृ०-158.

[4] वही,161.

[5] शर्मा, तेजेंद्र(सं०), देशान्तर प्रवासी भारतीयों की कहानियाँ, हिंदी अकादमी, दिल्ली समुदाय भवन, पद्म नगर, किशनगंज, दिल्ली-110007, पृ०-116.

[6] बेदी, सुषम, https://www.abhivyakti hindi.org/kahaniyan/vatan_se_ door/2005/gunahgar/gunahgar1.htm

[7] वही.

[8] वही.

[9] शर्मा, तेजेंद्र(सं.), देशान्तर प्रवासी भारतीयों की कहानियाँ, हिंदी अकादमी, दिल्ली समुदाय भवन, पद्म नगर, किशनगंज, दिल्ली-110007,पृ०-276.